Bihar Board Class 11th Hindi Book Notes पद्य Chapter 14 कबीर के पद

कबीर के पद कवि परिचय – (1399-1518)

कबीर का जन्मकाल भी निश्चित प्रमाण के अभाव में विवादास्पद रहा है। फिर भी, बहुत से विद्वानों द्वारा सन् 1399 ई० को उनका जन्म और सन् 1518 ई० को उनका शरीर त्याग मा लिया गया है। इस तरह कुल एक सौ बीस वर्षों की लम्बी आयु तक जीवित रहने का सौभाग्य संत कवि कबीर को मिला था। जीवन रूपी लम्बी चादर को इन्होंने इतने लम्बे काल तक ओढा, जीया और अंत में गर्व के साथ कहा भी कि "सो चादर सुन नर मुनि ओढ़ी-ओढ़ी के मैली कीन्हीं चदरिया।

दास कबीर जतन से ओढ़ी ज्यों की त्यों धरि दीनि चदरिया।" हिन्दी साहित्य के स्वर्णयुग भक्तिकाल के पहले भक्त कवि कबीरदास थे। भक्ति को जन-जन तक काव्य रूप में पहुँचा कर उससे सामाजिक चेतना को जोड़ने का काम भक्तिकालीन भक्त कवियों ने किया। ऐसा भक्त कवियों में पहला ही नहीं सबसे महत्वपूर्ण नाम भी कबीर का ही माना जाता है।

कहा जाता है कि एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से जन्म लेने के बाद लोक-लाज के भय से माता द्वारा परित्यक्त नवजात शिशु कबीर बनारस के लहरतारा तालाब के किनारे नीरू और नीमा नामक जुलाहा दम्पति द्वारा पाये और पुत्रवत पाले गये।

कबीर रामानन्दाचार्य के ही शिष्य माने जाते हैं पर गुरु मंत्र के रूप में प्राप्त राम नाम को उन्होंने सर्वथा निर्गुण रूप में स्वीकार और अंगीकार किया। अनजाने सिद्ध और नाथ-साहित्य से भी गहरे तक प्रभावित रहे। विशेष पंथ या मठ-मंदिर के आजन्म विरोधी रहे। कहा जाता है कि उनको कमाल नामक पुत्र और कमाली नामक एक पुत्री भी थी।

सिकंदर लोदी जैसे कट्टर मुसलमान शासक के काल में भी ऐसी धर्म निरपेक्ष ही नहीं कट्टरता-विरोधी उक्तियाँ कबीर से ही संभव थीं। शायद उसके अत्याचार का वे शिकार हुए भी थे। मृत्युकाल में उन्होंने मगहर की यात्रा की थी।

कबीर के पद कविता का भावार्थ

प्रथम पद महान् निर्गुण संत, परम्परा, भंजक, एकेश्वरवादी चिंतक कवि, कबीर संतों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि हे संतो ! देखो यह संसार बौरा गया है, पागल हो गया है। इसकी विवेक . बुद्धि नष्ट हो गयी है। जब भी मैं इन सांसारिक जीवों को सत्य के बारे में बताना चाहता हूँ।

ये मुझे उल्टा-सीधा कहते हैं, मुझे मारने दौड़ते हैं और जो कुछ इनके इर्द-गिर्द माया प्रपंच है उसे ये सत्य मान बैठे हैं।

मुझे ऐसे अनेक नियम-धर्म के कठोर पालक दिखे जो हर मौसम में शरीर को कष्ट देकर स्नान करते हैं, आत्म ज्ञान से शून्य होकर पत्थर के देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। अनेक पीर (धर्म गुरु) और औलिया (संत) मिले जो कुरान जैसे ग्रंथ की गलत तथ्यहीन व्याख्या अपने शिष्यों को समझा कर उनको भटका चुके हैं। उन्हें अपने पीर औलिया होने का घमंड हो गया है।

पितृ (मरे हुए पूर्वज) की सेवा पत्थरों की मूर्ति पूजा और तीर्थटन करने वाले धार्मिक अहंकारी हो चले हैं। स्वयं को संत, महात्मा धार्मिक दर्शन के लिए टोपी, माला, तिलक-छाप धारण किये हुए हैं और अपनी स्वाभाविक स्थिति भूल चुके हैं। सचमुच के महान् वीतरागी संतों द्वारा रचित साखी सबद आदि गाते घुमते चलते हैं। इस संसार के प्राणी अपने को हिन्दू-मुस्लिम में बाँट चुके हैं।

एक को राम प्यारा है तो दूसरे को रहमान प्यारे हैं। छोटी-छोटी बातों पर ये एक-दूसरे के रक्त के प्यासे हो लड़-मर पड़ते हैं? लेकिन अभिमान अहंकार के वशीभूत हो ये घर-घर बाह्याचरण का आडम्बर युक्त पूजा, कर्मकाण्ड का मंत्र देते चलते हैं। मुझे तो लगता है कि ये तथाकथित गुरु अपने शिष्यों सहित माया के सागर में डूब चुके हैं। अन्त में इन्हें पछताना ही पड़ेगा।

ये हिन्दू-मुसलमान, पीर औलिया सभी ईश्वर-धर्म के मूल तत्त्व और मर्म को भूल चुके हैं। कई बार इनकी मैंने समझाकर कहा कि ईश्वर को कर्मकाण्ड बाह्यचार से नहीं बल्कि सहज जीवन-यापन की पद्धति से ही प्राप्त किया जा सकता है। क्योंकि परमब्रह्म ईश्वर अल्ला अत्यंत सहज और सरल हैं।

प्रस्तुत पद में कबीर ने अपने समय के साम्प्रदायिक तनावग्रस्त माहौल का भी वर्णन किया है। पद में अनायास रूप से अनुप्रास, वीप्सा. आदि अलंकार आये हैं। पद शांत रस का अनूठा उदाहरण है।

द्वितीय पद साधना के क्षेत्र के सहज सिद्ध हठयोगी, भावना के क्षेत्र में आकर कितना कोमल प्राण, भावुक, भाव विह्वल, विदग्ध हृदय हो सकता है, यह विरोधाभास कबीर में उपलब्ध हो सकता है।

चिर विरहिणी कबीर आत्मा विरह विदग्ध अवस्था की चरम स्थिति में
चीत्कार करती हुई कहती है कि हे बलिया (बाल्हा) प्रियतम तुझे कब
देवूगी तेरा प्रेम मेरे भीतर इस तरह से व्याप्त हो गया है कि दिन-रात
तुम्हारे दर्शन की आतूरता आकुलता बनी रहती है। मेरी आँखें केवल तुमको देखना चाहती हैं, ये लगातार खुली रहती हैं कि तुम्हारे दीदार से वंचित न हो जाएँ।

हे मेरे भर्तार (स्वामी) तुम भी इतना सोच विचार लो कि तुम्हारे बिना शरीर में जो विरहाग्नि उत्पन्न हुई है वह शरीर को कैसे जलाती होगी। मेरी गुहार सुनो, बहरा मत बन जाओ मैं जानती हूँ कि तुम धीरता की प्रतिमूर्ति हो, शाश्वत हो लेकिन मेरी शरीर कच्चा कुम्भ है और उसने प्राण रूपी नीर है। घड़ा कभी भी फूट सकता है, मृत्यु कभी भी हो सकती है। तुमसे बिछड़े हुए भी बहुत दिन हो गये, अब मन को किसी भी प्रकार से धीरता प्राप्त नहीं हो पाती।

जब तक यह शरीर है, मेरे दु:ख का नाश करने वाले तुम एक बार मुझे अपना "दरस-परस" करा दो। मैं अतृप्ति को साथ लिये मरना नहीं चाहती। तुमसे मैंने प्रेम किया है, विरह भी भोंग रही हूँ किन्तु यदि हमारा मिलन नहीं हुआ, प्रेम का सुखान्त नहीं हुआ तो यह तुम्हारे जैसे सर्वशक्तिमान आर्तिनाशक के विरुद्ध के विरुद्ध बात होगी।

प्रस्तुत पद में कबीर ने भारतीय रहस्यवाद का सुन्दर वर्णन किया है। जहाँ जीवात्मा और परमात्मा का सम्बन्ध प्रेमी और प्रेमास्पद के रूप में चित्रित है।

रूपक और अनुप्रास अलंकार के उदाहरण यत्र-तत्र उपलब्ध है। सम्पूर्ण पद में शांत रस का पूर्ण परिपाक हुआ है।

https://www.evidyarthi.in/

कबीर के पद कठिन शब्दों का अर्थ

पतियाना-विश्वास करना। धावै-दौड़ना। व्यापै-अनुभव। रती-तनिक (रत्ती, रती)। नेमी-नियम का पालन करने वाला। बधीर-बहरा, जो कम सुने या न सुने। आतम-आत्मा। अगिनी-अग्नि। पखानहि-पत्थर को। दादि-विनती, स्तुति। पीर-धर्म गुरु। गुसांई-गोस्वामी, मालिक। औलिया-सन्त। जिन-मत, नहीं (निषेध सूचक)। कितेब-किताब, पुस्तक। भांडै-बर्तन। मुरीद-शिष्य, चेला, अनुयायी। छता-अक्षत, रहते हुए। तदवीर-उपाय। आरतिवंत-दुःखी। डिंभ-दंभ। रहिमाना-दयालु। पीतर-पीतल, पितर, पुरखा। महिमा-महत्त्व। मूए-मरे। बलिया-प्रियतम। अहनिस-दिन-रात।

कबीर के पद काव्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

1. संतो देखत जग बौराना.....नमें कछु नहिं ज्ञाना।
व्याख्या-
प्रस्तुत पंक्तियों में कबीरदास जी ने धार्मिक क्षेत्र में उलटी रीति और संसार के लोगों के बावलेपन का उल्लेख किया है। वे संतों अर्थात् सज्जन तथा ज्ञान-सम्पन्न लोगों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि संतो! देखो, यह संसार बावला या पागल हो गया है? इसने उल्टी राह पकड़ ली है। जो सच्ची बात कहता है उसे लोग मारने दौड़ते हैं। इसके विपरीत जो लोग गलत और झूठी बातें बताते हैं उन पर वे विश्वास करते हैं। मैंने धार्मिक नियमों और विधि-विधानों का पालन करने वाले अनेक लोगों को देखा है। वे प्रातः उठकर स्नान करते हैं, तथा मंदिरों में जाकर पत्थर की मूर्ति को पूजते हैं। मगर उनके पास तनिक भी ज्ञान नहीं है। वे अपनी आत्मा को नहीं जानते हैं और उसकी आवाज को मारते हैं, अर्थात् अनसुनी करते हैं, अर्थात् अनसुनी करते हैं, सारांशतः कबीर कहना चाहते हैं कि ऐसे लोग केवल बाहरी धर्म-कर्म और नियम-आचार जानते हैं जबकि अन्त: ज्ञान से पूर्णतः शून्य हैं।

2. बहुतक देखा पीर औलिया.....उनमें उहै जो ज्ञाना।
व्याख्या-
कबीरदास जी ने अपने पद की प्रस्तुत पंक्तियों में मुसलमानों के तथाकथित पीर और औलिया के आचरणों का परिहास किया है। वे कहते हैं कि मैंने अनेक पीर-औलिये को देखा है जो नित्य कुरान पढ़ते रहते हैं। उनके पास न तो सही ज्ञान होता है और न कोई सिद्धि होती है फिर भी वे लोगों को अपना मुरीद यानी अनुगामी या शिष्य बनाते और उन्हें उनकी समस्याओं के निदान के उपाय बताते चलते हैं। यही उनके ज्ञान की सीमा है। निष्कर्षतः कबीर कहना चाहते हैं कि ये पीर-औलिया स्वतः अयोग्य होते हैं लेकिन दूसरों को ज्ञान सिखाते फिरते हैं। इस तरह ये लोग ठगी करते हैं।

3. आसन मारि डिंभ धरि.....आतम खबरि न जाना।
व्याख्या-
कबीरदास जी का स्पष्ट मत है कि जिस तरह मुसलमानों के पीर औलिया ठग हैं उसी तरह हिन्दुओं के पंडित ज्ञान-शूल। वे कहते हैं कि ये नकली साधक मन में बहुत अभिमान रखते हैं और कहते हैं कि मैं ज्ञानी हूँ लेकिन होते हैं ज्ञान-शूल। ये पीपल पूजा के रूप में वृक्ष पूजते हैं, मूर्ति पूजा के रूप में पत्थर पूजते हैं। तीर्थ कर आते हैं तो गर्व से भरकर अपनी वास्तविकता भूल जाते हैं। ये अपनी अलग पहचान बताने के लिए माला, टोपी, तिलक, पहचान चिह्न आदि धारण करते हैं और कीर्तन-भजन के रूप में साखी, पद आदि गाते-गाते भावावेश में बेसुध हो जाते हैं। इन आडम्बरों से लोग इन्हें महाज्ञानी और भक्त समझते हैं। लेकिन विडम्बना यह है कि इन्हें अपनी आत्मा की कोई खबर नहीं होती है। कबीर के अनुसार वस्तुतः ये ज्ञानशून्य और ढोंगी महात्मा हैं।

4. हिन्दु कहै मोहि राम पियारा.....मरम न काहू जाना।
व्याख्या-
कबीर कहते हैं कि हिन्दू कहते हैं कि हमें राम प्यारा है। मुसलमान कहते हैं कि हमें रहमान प्यारा है। दोनों इन दोनों को अलग-अलग अपना ईश्वर मानते हैं और आपस में लड़ते तथा मार काट करते हैं। मगर, कबीर के अनुसार दोनों गलत हैं। राम और रहमान दोनों एक सत्ता के दो नाम हैं। इस तात्त्विक एकता को भूलकर नाम-भेद के कारण दोनों को भिन्न मानकर आपस में लड़ना मूर्खता है। अत: दोनों ही मूर्ख हैं जो राम-रहीम की एकता से अनभिज्ञ हैं।

5. घर घर मंत्र देत.....सहजै सहज समाना।
व्याख्या-
कबीरदास जी इन पंक्तियों में कहते हैं कि कुछ लोग गुरु बन जाते हैं मगर मूलतः वे अज्ञानी होते हैं। गुरु बनकर वे अपने को महिमावान समझने लगते हैं। महिमा के इस अभिमान से युक्त होकर वे घर-घर घूम-घूम कर लोगों को गुरुमंत्र देकर शिष्य बनाते चलते हैं। कबीर के मतानुसार ऐसे सारे शिष्य गुरु बूड़ जाते हैं; अर्थात् पतन को प्राप्त करते हैं और अन्त समय में पछताते हैं। इसलिए कबीर संतों को सम्बोधित करने के बहाने लोगों को समझाते हैं कि ये सभी लोग भ्रमित हैं, गलत रास्ते अपनाये हुए हैं।

मैंने कितनी बार लोगों को कहा है कि आत्मज्ञान ही सही ज्ञान है लेकिन ये लोग नहीं मानते हैं। ये अपने आप में समाये हुए हैं, अर्थात् स्वयं को सही तथा दूसरों को गलत माननेवाले मूर्ख हैं। यदि आप ही आप समाज का अर्थ यह करें कि कबीर ने लोगों को कहा कि अपने आप में प्रवेश करना ही सही ज्ञान है। तब यहाँ 'आपहि आप समान' का अर्थ होगा-'आत्मज्ञान प्राप्त करना' जो कबीर का प्रतिपाद्य है।

6. हो बलिया कब देखेंगी.....न मानें हारि।
व्याख्या-
प्रस्तुत पंक्तियों में कबीरदास जी ने ईश्वर के दर्शन पाने की अकुलाहट
भरी इच्छा व्यक्त की है। वे कहते हैं कि प्रभु मैं तुम्हें कब देखूगा? अर्थात् तुम्हें देखने की मेरी इच्छा कब पूरी होगी, तुम कब दर्शन दोगे? मैं दिन-रात तुम्हारे दर्शन के लिए आतुर रहता हूँ। यह इच्छा मुझे इस तरह व्याप्त किये हुई है कि एक पल के लिए भी इस इच्छा से मुक्त नहीं हो पाता हूँ।

मेरे नेत्र तुम्हें चाहते हैं और दिन-रात प्रतीक्षा में ताकते रहते हैं। नेत्रों की चाह इतनी प्रबल है कि ये न थकते हैं और न हार मानते हैं। अर्थात् ये नेत्र जिद्दी हैं और तुम्हारे दर्शन किये बिना हार मानकर बैठने वाले नहीं हैं। अभिप्राय यह कि जब ये नेत्र इतने जिद्दी हैं, और मन दिन-रात आतुर होते हैं तो तुम द्रवित होकर दर्शन दो और इनकी जिद पूरी कर दो।

7. "बिरह अगिनि तन.....जिन करहू बधीर।"
व्याख्या-
प्रस्तुत पंक्तियों में कबीरदास जी अपनी दशा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि हे स्वामी ! तुम्हारे वियोग की अग्नि में यह शरीर जल रहा है, तुम्हें पाने की लालसा आग की तरह मुझे दग्ध कर रही है। ऐसा मानकर तुम विचार कर लो कि मैं दर्शन पाने का पात्र हूँ या उपेक्षा का?

कबीरदास जी अपनी विरह-दशा को बतला कर चुप नहीं रह जाते हैं? वे एक वादी अर्थात् फरियादी करने वाले व्यक्ति के रूप में अपना वाद या पक्ष या पीड़ा निवेदित करते हैं और प्रार्थना. करते हैं कि तुम मेरी पुकार सुनो, बहरे की तरह अनसुनी मत करो। पंक्तियों की कथन-भगिमा की गहराई में जाने पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि कबीर

https://www.evidyarthi.in/

याचक की तरह दयनीय मुद्रा में विरह-निवेदन नहीं कर रहे हैं। उनके स्वर में विश्वास का बल है और प्रेम की वह शक्ति है जो प्रेमी पर अधिकार-बोध व्यक्त करती है।

8. तुम्हे धीरज मैं आतुर.....आरतिवंत कबीर।
व्याख्या-
अपने आध्यात्मिक विरह-सम्बन्धी पद की प्रस्तुत पंक्तियों में कबीर
अपनी तुलना आतुरता और ईश्वर की तुलना धैर्य से करते हुए कहते हैं कि हे स्वामी ! तुम धैर्य हो और मैं आतुर। मेरी स्थिति कच्चे घड़े की तरह है। कच्चे घड़े में रखा जल शीघ्र घड़े को गला कर बाहर निकलने लगता है। उसी तरह मेरे भीतर का धैर्य शीघ्र समाप्त हो रहा है अर्थात् मेरा मन अधीर हो रहा है। आप से बहुत दिनों से बिछुड़ चुका हूँ।

मन अधीर हो रहा है तथा शरीर क्षीण हो रहा है। अपने भक्त कबीर पर कृपाकर अपने दर्शन दीजिए। आपके दर्शन से ही मेरा जीवन सफल हो सकता है। कबीरदास का मन ईश्वर से मिलने के लिए व्याकुल है। उनकी अन्तरात्मा ईश्वर के लिए आतुर है। वास्तव में, ईश्वर के दर्शन से ही कबीर का जीवन सफल हो सकता है।